साप्ताहिक
Live not just breaTHE

MPHIN/2015/63220
MP/IDC1528/16-18

दि कार्मिक पोस्ट

वर्ष : 6, अंक : 35 (प्रति बुधवार), इन्दौर, 21 अप्रैल से 27 अप्रैल 2021 पेज : 8 कीमत : 3 रुपये

वायु प्रदूषण से भारतीय व्यापार को प्रत्येक वर्ष 7 लाख करोड़ का नुकसान

नई दिल्ली। भारत में वायु प्रदूषण की वजह से प्रत्येक वित्तीय वर्ष में भारतीय व्यापार जगत को करीब 95 बिलियन अमरीकी डालर (7 लाख करोड़) का नुकसान उठाना पड़ता है, जो कि भारत की कुल जीडीपी का करीब 3 प्रतिशत है। यह नुकसान सालाना कर संग्रह के 50त्न के बराबर है या भारत के स्वास्थ्य बजट का डेढ़ गुना है। डलबर्ग एडवाइजर्स ने यह रिपोर्ट क्लीन एयर फंड और भारतीय उद्योग परिसंघ (सीआईआई) के सहयोग से तैयार की है। यह रिपोर्ट वायु प्रदूषण के भारी आर्थिक नुकसान के साथ-साथ स्वास्थ्य पर इसके विनाशकारी प्रभावों को सामने रखते हुए वायु प्रदूषण से निपटने के लिए तत्काल सक्रिय होने पर जोर देता है।

डलबर्ग का अनुमान है कि भारत के कामगार अपने स्वास्थ्य पर वायु प्रदूषण के प्रतिकूल प्रभावों के कारण प्रति वर्ष 130 करोड़ (1.3 बिलियन) कार्यदिवसों की छुट्टी लेते हैं जिसके 6 बिलियन अमरीकी डालर के राजस्व का नुकसान होता है। वायु प्रदूषण का श्रमिकों के मस्तिष्क और शरीर पर गहरा प्रभाव पड़ता है, जिससे उनकी उत्पादकता कम हो जाती है और इससे व्यापार राजस्व 24 बिलियन अमरीकी डालर तक घटता है। इसका प्रभाव राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था पर भी पड़ता है। रिपोर्ट में पाया गया है कि वायु की निम्न गुणवत्ता भी उपभोक्ताओं की अपने घरों से बाहर निकलने की इच्छा को कम करती है, जिससे बाज़ार में उपभोक्ताओं की पहुँच घटती है और अंततः सीधे उपभोक्ता से जुड़े व्यवसायों को 22 बिलियन अमरीकी डालर के राजस्व का घाटा होता है। 2019 में भारत में वायु प्रदूषण से 17 लाख लोगों की अकाल मृत्यु हुई जो कि उस वर्ष भारत में हुई सभी मौतों का 18 प्रतिशत थी। 2030 तक इस आंकड़े के और बढ़ने की आशंका है, जिससे भारत उन प्रमुख देशों में शामिल हो जायेगा जहाँ समय पूर्व मृत्यु दर से वैश्विक अर्थव्यवस्था को नुकसान होता है। आर्थिक रूप से देखें तो कार्य-दिवसों के नुकसान के कारण 2019 में भारतीय अर्थव्यवस्था को 44 बिलियन अमरीकी डॉलर का नुकसान हुआ। इस रिपोर्ट से यह भी पता चलता है कि भारत का आईटी क्षेत्र, जो देश के जीडीपी में 9त्न का योगदान देता है और विदेशी निवेश आकर्षित करने का अहम क्षेत्र है, प्रदूषण के कारण उत्पादकता कम होने के कारण प्रति वर्ष 1।3 बिलियन अमरीकी डालर का नुकसान उठाता है। यदि वर्तमान में अनुमानित दरों पर वायु प्रदूषण में वृद्धि जारी रहती है, तो यह आंकड़ा 2030 तक लगभग दोगुना हो सकता है भारत पिछले दशक में दुनिया का पांचवां सबसे प्रदूषित देश बन गया है और दुनिया के 30 सबसे प्रदूषित शहरों में से 21 भारत में हैं। भारत का मीडीअन ऐज 2019 के 27 वर्ष से बढ़कर 2030 हो जाएगा, इससे वायु प्रदूषण के खतरे बढ़ेंगे क्योंकि वायु प्रदूषण से जुड़ी फेफड़ों संबंधी समस्याएं और फेफड़ों का कैंसर, जो बीमारियां बुजुर्गों को अधिक प्रभावित करती हैं, तेजी से बढ़ने के कारण मृत्यु दर में वृद्धि होगी। रिपोर्ट जारी करते हुए श्री गौरव गुप्ता, पार्टनर, एशिया डायरेक्टर, डलबर्ग ने कहा, ÷यह रिपोर्ट बताती है कि वायु प्रदूषण व्यवसाय और अर्थव्यवस्था को समग्रता में कैसे प्रभावित करता है। हालांकि सरकार ने इस समस्या के हल के लिए आक्रामक उपाय किए हैं, लेकिन दुनिया भर में वायु प्रदूषण पर जोर इसके सार्वजनिक स्वास्थ्य संबंधी प्रभावों के संबंध में दिया जा रहा है। भारतीय व्यापार जगत के लिए अब यह महत्वपूर्ण हो गया है कि वे अपने लाभ और हानि के विवरणों में वायु उत्सर्जन को शामिल करें। स्वच्छ वायु व्यवसायों के फलने-फूलने और 2025 तक भारत के 5 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर की अर्थव्यवस्था बनने की परिकल्पना के सच होने की एक पूर्व शर्त है। इस लक्ष्य को पाने के लिए अग्रणी उद्योगपतियों को स्वच्छ वायु आंदोलन से खुद को और ज्यादा जोड़ना होगा और इसकी पैरवी करनी होगी। सीआईआई की डिप्टी डायरेक्टर जनरल सुश्री सीमा अरोड़ा ने कहा, ÷इस रिपोर्ट को तैयार करने में इस्तेमाल किए गए सर्वेक्षण अंतर्दृष्टि, साक्षात्कार और आंकड़ों के विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि विशिष्ट व्यवसायों और उनके कर्मचारियों की वायु गुणवत्ता सुधारने में प्रत्यक्ष भूमिका है। हालाँकि इस सिलसिले में बहुत कुछ विचार करने की आवश्यकता है, हमारे निष्कर्षों के अनुसार इस व्यावसायिक संकट के व्यापारिक समाधान में व्यवसाय संचालन और आपूर्ति श्रृंखला का ऐसा कायाकल्प करना जो प्रदूषण को खत्म करे, नवीकरणीय ऊर्जा प्रौद्योगिकी अपनाना, सीएसआर गतिविधियों के माध्यम से उत्सर्जन कम करना और ज्यादा महत्वाकांक्षी प्रदूषण नीतियों के लिए अभियान चलाना शामिल है। हमारा मानना है कि सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों के बीच सक्रिय और निरंतर सहयोग से, साफ़ नीला आसमान और पहले से ज्यादा सेहतमंद अर्थव्यवस्था जल्द ही भारत की वास्तविकता बन सकती है। रिपोर्ट के मुताबिक स्वास्थ्य और पर्यावरणीय प्रभाव के साथ-साथ वायु प्रदूषण का भारत की अर्थव्यवस्था पर गहरा प्रभाव पड़ता है, और वायु गुणवत्ता में सुधार से भारत न केवल स्वस्थ होगा, बल्कि समृद्ध भी बनेगा।

सौर ऊर्जा - लक्ष्य की ओर बढ़ने की बजाय पीछे चल रहा है भारत

मुंबई। सरकार का दावा है कि वो 2022 तक सोलर प्लांट से 100,000 मेगावाट बिजली पैदा करने के लक्ष्य को हासिल कर लेगी। पर इस लक्ष्य का पूरा होना कितना मुश्किल है और इसके सामने क्या समस्याएं हैं। आइए इसकी जमीनी हकीकत को समझते हैं भारत ने 2022 तक अक्षय ऊर्जा की मदद से 175,000 मेगावाट बिजली के उत्पादन का लक्ष्य रखा था। जिसमें से 100,000 मेगावाट सौर ऊर्जा के जरिये हासिल की जाएगी। इसमें से 60,000 मेगावाट यूटिलिटी स्केल सोलर प्लांट और 40,000 मेगावाट रूफटॉप सोलर के जरिए प्राप्त की जाएगी। वहीं यदि लोक सभा की ऊर्जा पर बनाई गई स्थाई समिति द्वारा दिए आंकड़ों पर गौर करें तो उसके अनुसार मार्च 2020 तक देश में करीब ग्रिड से जुड़े 32,000 मेगावाट के सोलर प्लांट बनाए जा चुके हैं। जबकि जनवरी 2020 तक 87,380 मेगावाट के प्लांट विकास के विभिन्न चरणों में हैं। जिनके पूरा होने में वक्त है। वहीं अगले 2 वर्षों में मंत्रालय 15,000 मेगावाट के लिए टेंडर जारी करने की योजना बना रहा है। हालांकि यह योजना पूरी होती हुई नहीं दिख रही है क्योंकि अगर पिछले 2 सालों में जारी किये गए टेंडरों पर नजर डालें तो उसमें से ज्यादातर नए टेंडर सफल नहीं हो सके हैं। और वो लगातार पिछड़ रहे हैं। ऊपर से कोविड -19 महामारी ने उसकी रफ्तार को और सुस्त बना दिया है। यह जानकारी सेंटर फॉर साइंस एंड एनवायरनमेंट द्वारा जारी फैक्टशीट में सामने आई है

कोविड-19 से खुद को बचाना है तो पहने दोहरा मास्क -अध्ययन

न्यूजर्सी। एक नए अध्ययन से पता चलता है कि दोहरा फेस मास्क पहनने से सार्स-सीओवी-2 से संक्रमित बूदों को छानने की क्षमता लगभग दोगुनी हो सकती है, जिससे उन्हें पहनने वाले की नाक और मुंह तक पहुंचने से रोका जा सकता है। यहां बताते चले कि सार्स-सीओवी -2 से ही कोविड-19 बीमारी होती है। इसका मतलब यह नहीं है कि कपड़े के परतों को जोड़ना, बल्कि मास्क का कोई ऐसा भाग जो सहीं से जुड़ा नहीं हो, या उसके द्वारा संक्रमित बूंदों के नाक और मुंह तक पहुंचने की आशंका हो, उन जगहों को बंद करना है।

यूएनसी स्कूल ऑफ मेडिसिन में संक्रामक रोगों के एसोसिएट प्रोफेसर और अध्ययनकर्ता एमिली सिकबर्ट-बेनेट ने कहा कि चिकित्सा प्रक्रिया के लिए बनाए गए मास्कों की छानने की क्षमता बहुत अच्छी होती है, लेकिन जिस तरह से हम मास्क को अपने चेहरे पर लगाते हैं वह बिल्कुल सही नहीं है। मास्क के सही तरीके से चेहरे पर फिट बैठने तथा उनकी छानने की क्षमता (फिटेड फिल्ट्रेशन एफिशिएंसी, एफएफई) का परीक्षण करने के लिए, यूएनसी के शोधकर्ताओं ने यूएनसी-चैपल हिल परिसर में अपने सहयोगियों के साथ प्रयोग किया। वहां उन्होंने 10/10 फुट के जंगरोधी स्टील के चैम्बर में छोटे नमक के कणों (एरोसोल के बराबर) भर दिया फिर शोधकर्ताओं ने इस बात की जांच की, कि दो मास्क लगाने से ये कण उनके श्वास से इन्हें बाहर रखने में कितने प्रभावशाली हैं। प्रयोग में हर एक मास्क को धातु के नमूने के साथ फिट किया गया था, जो संपर्क में आने वाले (एक्सपोजर) चैंबर में टयूबिंग से जुड़ा हुआ था, जिसने शोधकर्ता के मास्क के नीचे श्वास स्थान में प्रवेश करने वाले कणों की संघनता को मापा। एक दूसरी ट्यूब ने कक्ष में कणों की परिवेश करने की संघनता की मापा की। चैम्बर के मुकाबले मास्क के नीचे सांस लेने की जगह में कण की सघनता को मापकर शोधकर्ताओं ने एफएफई का निर्धारण किया। यूएनसी के स्कूल ऑफ मेडिसिन के, फिलिप क्लैप ने कहा हमने चेंबर में उसी तरह की गतिविधि की जैसा एक व्यक्ति दिन भर कर सकता है, जिसमें कमर के बल झुकना, बात करना, और बाएं, दाएं, ऊपर और नीचे देखना आदि शामिल है। जेएएमए इंटरनल मेडिसिन में प्रकाशित अध्ययन के निष्कर्षों के अनुसार, प्रत्येक व्यक्ति के चेहरे का आकार अलग-अलग होता है और मास्क के चेहरे पर सही से फिट नहीं होने के कारण, मास्क की आधारभूत कणों को छानने की क्षमता (एफएफई) अलग-अलग होती है। लेकिन आमतौर पर, जब मास्क चेहरे पर सही से लगाया जाता है तो यह, कोविड-19 से संक्रमित बूदों को

बाहर रखने में लगभग 40-60 फीसदी प्रभावी होता है। एक कपड़े का मास्क लगभग 40 फीसदी तक प्रभावी होता है। दोहरा फेस मास्क पर उनके निष्कर्षों से पता चलता है कि जब सर्जिकल मास्क के ऊपर कपड़े का मास्क लगाया जाता है, तो फिटेड फिल्ट्रेशन एफिशिएंसी (एफएफई) में लगभग 20 फीसदी का सुधार होता है और यदि यह सहीं ढ़ग से फिट होता है तो इसमें और अधिक सुधार होने की गुंजाइश होती है। जब कपड़े की एक परत के ऊपर दूसरी परत, या और परतें लगाई जाती है तो मास्क में खाली भाग जिससे बूदें नाक, मुंह तक पहुंच सकती है ये उनको रोक देता है। जब इस तरह के कपड़े स बने मास्क चेहरे पर सही तरीके से फिट बैठते हों तो फिटेड फिल्ट्रेशन एफिशिएंसी (एफएफई) में 16 फिसदी का का सुधार होता है। सिकबर्ट-बेनेट ने कहा हमने पाया है कि दो ढ़ीले मास्क पहनने से आप तक पहुंचने वाली संक्रमित बूदें छन नहीं पाएंगी, इसका मतलब है कि आपको वैसा लाभ नहीं मिल पाएगा, जैसा कि एक, चुस्त मास्क से मिलता है। मौजूदा आंकड़ों के अनुसार कोविड-19 फैलने से रोकने के लिए मास्क कितना प्रभावी है। दोहरे मास्क (डबल-मास्किंग) का सबसे अच्छा तरीका वह है जब आप और दूसरा व्यक्ति जिसके साथ आप बातचीत कर रहे हैं दोनों ने सही ढंग से, एक चुस्त मास्क पहना हो, जो नाक और मुंह को पूरा ढ़का हुआ हों। - साभार

कोरोना के दूसरे वेरिएंट से कहीं ज्यादा तेजी से फैल सकता है ब्राजील लिनिएज (पी.1) वायरस स्ट्रेन

लंदन। हाल ही में किए एक अंतराष्ट्रीय शोध से पता चला है कि ब्राजील लिनिएज (पी.1) वायरस स्ट्रेन दूसरे वेरिएंट से कहीं ज्यादा तेजी से फैल सकता है। सार्स-कोव-2 का यह वैरिएंट पी.1 पहली बार ब्राजील के अमेजन राज्य की राजधानी मनौस में देखा गया था। शोध के मुताबिक यह पहले मिले स्ट्रेन की तुलना में दोगुना तेजी से फैल सकता है। इससे जुड़ा शोध जर्नल साइंस में प्रकाशित हुआ है।

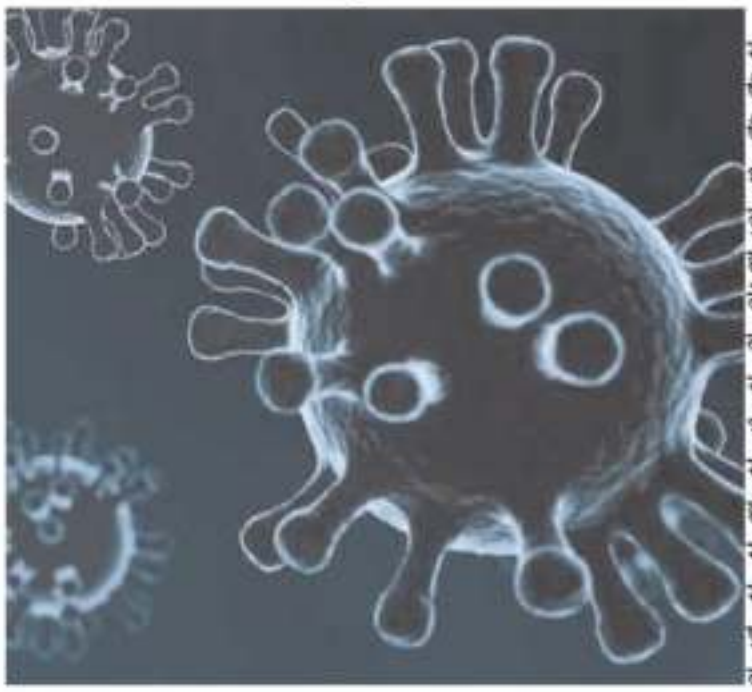

यह स्ट्रेन पिछले साल के अंत में पैदा और नवंबर में फैलना शुरू हुआ था। दूसरे स्ट्रेन की तुलना में यह जल्दी ही फैल गया था। देश में कई लोगों का मानना है कि यह उन लोगों को भी संक्रमित कर सकता है, जो पहले ही प्रारंभिक स्ट्रेन से संक्रमित हुए थे। संक्रमण की प्रारंभिक अवधि के दौरान शहर में लगभग 70 फीसदी लोग इससे संक्रमित हो गए थे। मनौस में फैलने के बाद यह वैरिएंट जल्द ही पूरे ब्राजील में फैल गया था। इसके बाद यह अन्य देशों में फैलना शुरू हुआ, आज यह 37 देशों में फैल चुका है। मॉलिक्यूलर क्लॉक विश्लेषण के माध्यम से शोधकर्ताओं ने निर्धारित किया है कि वायरस में 17 पहचाने जाने योग्य म्यूटेशन थे। इनमें से तीन स्पाइक प्रोटीन म्यूटेशन एन501वाई, ई484के और के417टी विशेष रूप से चिंताजनक थे क्योंकि ये वायरस मानव कोशिकाओं से जुड़ सकने की अनुमति देते थे और कुछ मामलों में यह एंटीबॉडी से बचने में भी सहायता करते थे। साथ ही इसमें यह भी जानने का प्रयास किया है कि म्युटेशन के बाद इस वायरस की क्षमता कैसे बदल गई है। सिमुलेशन से पता चला है कि यह संस्करण पिछले उपभेदों की तुलना में 1.7 से 2.4 गुना तेजी से फैल सकता है। हालांकि इस बारे में कोई जानकारी नहीं है कि क्षमता में हुई इस वृद्धि से वायरस ज्यादा समय तक शरीर में रह सकता है। साथ ही इसी से वायरस में वृद्धि हुई है। इसके अलावा यह भी स्पष्ट नहीं हुआ था कि यह नया संस्करण लोगों को बीमार कर सकता है या कहीं अधिक घातक है। उनका अनुमान था कि मनौस में संक्रमित लोगों के मरने की सम्भावना पिछले स्ट्रेन की तुलना में 1.2 से 1.9 गुना ज्यादा थी। हालांकि यह स्पष्ट नहीं था कि यह म्युटेशन की वजह से हुआ था या इसके लिए शहर की स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली जिम्मेवार थी, जिसपर दबाव बढ़ गया था। शोधकर्ताओं का निष्कर्ष है कि इस पर अभी और शोध करने की जरुरत है कि क्या पी1 स्ट्रेन वास्तव में उन लोगों को संक्रमित करने में सक्षम है जो पहले ही दूसरे स्ट्रेन से संक्रमित हो चुके हैं या फिर जिन्हें वैक्सीन दी जा चुकी है। हाल ही में भारतीय सार्स कोव-2 जीनोमिक्स कंसोर्टियम (आईएनएसएसीओजी) द्वारा भारत में कोविड-19 के नमूनों की जीनोम सीक्वेंसिंग से पता चला था कि भारत में कोरोना वायरस के 771 चिंताजनक और एक नए तरह का वैरिएंट भी मौजूद है। इस जीनोम सीक्वेंसिंग में ब्रिटेन के वायरस बी.1.1.7 के 736 पॉजिटिव नमूने, दक्षिण अफ्रीकी वायरस लिनिएज (बी.1.351) के 34 पॉजिटिव नमूने और ब्राजील लिनिएज (पी.1) वायरस का एक नया मामला सामने आया था। - साभार

जलवायु से जुड़ी आपदाओं के चलते छह माह में 1.03 करोड़ लोग हुए विस्थापित

मुंबई। जलवायु से जुड़ी आपदाओं जैसे बाढ़, सूखा, तूफान आदि के चलते पिछले छह महीनों में 1.03 करोड़ से ज्यादा लोग विस्थापित हुए हैं। इनमें से करीब 60 फीसदी विस्थापित एशिया के थे। यह जानकारी 16 मार्च 2021 को इंटरनेशनल फेडरेशन ऑफ रेड क्रॉस एंड रेड क्रिसेंट सोसाइटीज (आईएफआरसी) द्वारा जारी रिपोर्ट में सामने आई है, जोकि इंटरनल डिस्प्लेसमेंट मॉनिटरिंग सेंटर (आईडीएमसी) द्वारा जारी आंकड़ों पर आधारित है। आईडीएमसी का अनुमान है कि बाढ़, सूखा, तूफान जैसी जलवायु सम्बन्धी आपदाओं के चलते हर साल दुनिया भर में औसतन 2.27 करोड़ लोग विस्थापित हो जाते हैं।

आईएफआरसी में कोर्डिनेटर हेलेन ब्रंट ने बताया कि पिछले छह महीनों के दौरान सितम्बर 2020 से फरवरी 2021 के बीच दुनिया भर में करीब 1.25 करोड़ लोग अपने ही देशों में विस्थापित होने को मजबूर हो गए थे। जिनमें से करीब 80 फीसदी लोगों के विस्थापन के लिए जलवायु और चरम मौसमी घटनाओं से जुड़ी आपदाएं जिम्मेवार थी। उनके अनुसार जलवायु से जुड़ी इन आपदाओं के चलते होने वाला यह विस्थापन एशिया में दुनिया के किसी भी अन्य क्षेत्र की तुलना में सबसे ज्यादा था। एक तरफ पहले ही कोरोना महामारी का दंश झेल रहे गरीब तबके पर अब जलवायु परिवर्तन के चलते दोहरी मार पड़ रही है। रिपोर्ट के अनुसार दुनिया भर में धीमी गति से शुरु होने वाली आपदाओं के कारण विस्थापित लोगों की संख्या बढ़ती ही जा रही है। चूंकि धीमी गति से शुरु होने के कारण इन घटनाओं से होने वाले विस्थापितों के विषय में सटीक आंकड़ें बड़ी मुश्किल से मिल पाते हैं7 यहां रहने वाले लोगों के रोजगार धीरे-धीरे समाप्त होता जाता है, जिसके कारण यह लोग विस्थापित या फिर पलायन करने को मजबूर हो जाते हैं। विश्व बैंक के एक अनुमान के अनुसार अकेले समुद्र के जलस्तर के बढ़ने के कारण इस सदी में करीब 9 करोड़ लोग विस्थापित हो जाएंगे। विस्थापन का असर ने केवल विस्थापितों पर पड़ता है, साथ ही इससे वो लोग और समुदाय भी प्रभावित होते हैं जो इन्हें समर्थन और शरण देते हैं। इनमें से कई विस्थापितों को ने केवल आश्रय, स्वास्थ्य, सुरक्षा, साफ़ पानी और स्वच्छता आदि के साथ-साथ लम्बे समय तक समर्थन और मदद की जरुरत रहती है7 विस्थापन का सबसे ज्यादा असर महिलाओं, बच्चों, बुजुर्गों, बीमार लोगों और पहले से ही हाशिए पर रह रहे लोगों पर पड़ता है।

भारत पर भी बढ़ रहा है खतरा– समय के साथ इन आपदाओं से होने वाला नुकसान भी बढ़ता जा रहा है। हाल ही में वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम द्वारा जारी ग्लोबल रिस्क रिपोर्ट 2021 में भी पर्यावरण से जुड़े मुद्दों जैसे जलवायु परिवर्तन, चरम मौसमी घटनाओं को सबसे आगे रखा गया था। जर्मनवॉच द्वारा जारी क्लाइमेट रिस्क इंडेक्स 2021 में भारत को दुनिया का 7वां सबसे जलवायु प्रभावित देश माना था7 इस इंडेक्स के मुताबिक 2019 में जलवायु से जुड़ी आपदाओं के चलते भारत में 2,267 लोगों की जान गई थी। वहीं देश को करीब 501,659 करोड़ रुपए का आर्थिक नुकसान उठाना पड़ा था। भारत के लिए भी 2020 आठवां सबसे गर्म वर्ष था। इस वर्ष तापमान सामान्य से 0.29 डिग्री सेल्सियस अधिक रिकॉर्ड किया गया था। हाल ही में काउंसिल ऑन एनर्जी, एनवायरनमेंट एंड वाटर (सीइइडब्लू) द्वारा किए शोध से पता चला है कि देश में 75 फीसदी से ज्यादा जिलों पर जलवायु परिवर्तन का खतरा मंडरा रहा है। इन जिलों में देश के करीब 63.8 करोड़ लोग बसते हैं।

सीवर के गड्ढ़ों में निकलने वाली जानलेवा जहरीली गैस का पता लगाएगा यह इलेक्ट्रॉनिक सेंसर

न्यू दिल्ली। यह सेंसर सीवरों में उत्पन्न होने वाली जहरीली और ज्वलनशील गैस जैसे- हाइड्रोजन सल्फाइड का पता लगा सकता है। सीवर में निकलने वाली जहरीली गैस के चलते कई सफाईकर्मियों की जान गई है। गैस के रिसाव से गंभीर खतरे हो सकते हैं जो श्रमिकों, इमारतों और पर्यावरण को नुकसान पहुंचा सकती है। किसी जगह पर गैस का रिसाव हो रहा है, इस बात का पता लगाने से इन खतरों को कम किया जा सकता है। हाल ही में भारत के कई उद्योगों से गैस रिसाव की घटनाओं में हजारों लोगों ने अपनी जान से हाथ धोएं हैं। दूसरी और संकरे सीवर है, जिनमें यह पता लगाना कठिन है कि वहां गैस का रिसाव हो रहा है। **इनको साफ करना बड़ा जोखिम भरा होता है।**

भारत में हर वर्ष सीवर की सफाई के दौरान कई सफाई कर्मचारियों की मौत हो जाती है। संसद में एक प्रश्न का उत्तर देते हुए बताया गया है कि पिछले चार सालों में सीवरों की हाथ (मैन्युअल) से सफाई के दौरान 389 लोगों की मौत हुई है। मौत के लिए सीवर में पहले से मौजूद जहरीली गैसें जिम्मेवार होती है। सीवर में मौजूद गैसों के बारे में पता लगाने जिसे इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आईओटी) कहते हैं। आईओटी आपस में कंप्यूटर से जुड़ा एक छोटा यंत्र है जो पता लगाता है और बिना मानव हस्तक्षेप के सूचनाओं का आदान-प्रदान करने की क्षमता रखता है। शोधकर्ताओं की एक टीम जिसमें सीईएनएस के डॉ चन्नबसवेश्वर येलामगाड और किंग अब्दुल्ला यूनिवर्सिटी ऑफ साइंस ऐंड टेक्नोलॉजी (केएयूएसटी) से प्रोफेसर खालिद एन. सलामा और उनके सहयोगियों ने सीवर में जहरीली गैसों के बारे में पता लगाने के लिए एक इलेक्ट्रॉनिक उपकरण विकसित किया है। जिसे इलेक्ट्रॉनिक नाक भी कह सकते है, जो एक तरह का सेंसर है। यह सेंसर सीवरों में उत्पन्न होने वाली जहरीली और ज्वलनशील गैस जैसे- हाइड्रोजन सल्फाइड का पता लगा सकता है। हाइड्रोजन सल्फाइड, ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में कार्बनिक पदार्थों से उत्पन्न होने वाली पहली गैस है, जो अक्सर सीवर और दलदली इलाकों में पायी जाती है। इस सेंसर को बेंगलूरू स्थित सेंटर फॉर नैनो ऐंड सॉफ्ट मैटर साइंसेज (सीईएनएस) के वैज्ञानिकों ने सऊदी अरब के सहयोग से तैयार किया है। इस सेंसर की मदद से सीवर साफ करने के दौरान अक्सर सफाई कर्मचारियों की होने वाली मोतों को रोकने में मदद मिल सकती है। इस सेंसर में दो परते होती हैं, सेंसर की ऊपरी परत पर एक अणु जो पॉलीमर बनाने के लिए अन्य समान अणुओं से बंध सकता है, जिसे मोनोमर कहते है। साथ ही इस परत में छेद होते हैं और हाइड्रोजन सल्फाइड के अणु इसमें पहले से ही मौजूद होते है। मोनोमर वे अणु होते हैं, जो अपने जैसे अणुओ की पहचान करके उनसे रासायनिक प्रतिक्रिया करते हैं। वहीं सेंसर की निचली परत में मौजूद गैस की गतिशीलता को प्रदर्शित करती है। इस प्रकार यह सेंसर हाइड्रोजन सल्फाइड (एच2एस) के अणुओं को पहले से केंद्रित कर रासायनिक प्रतिक्रिया शुरू करता है, जिसके कारण उपकरण के छेदों में बदलाव होता है। यह सेंसर अपने आसपास हाइड्रोजन सल्फाइड (एच2एस) गैस का पता लगा सकता है। प्रायोगिक सीमा में यह अति संवेदनशील सेंसर 100 करोड़ के लगभग 25वें भागों का पता लगा सकता है। मैटेरियल्स होराइजन और एडवांस्ड इलेक्ट्रॉनिक मैटेरियल्स नामक पत्रिका में प्रकाशित यह शोध मे बताया गया है कि यह सेंसर उच्च गुणवत्ता और क्षमता के साथ लगभग 8 महीने तक काम कर सकता है। यह जानकारी इंडिया साइंस वायर के द्वारा उपलब्ध कराई गई है।

– साभार

2021-2050 के दौरान उत्तराखंड में 1.6-1.9 डिग्री तक बढ़ सकता है तापमान

एक नए अध्ययन के अनुसार, पलायन को रोकने के लिए पर्वतीय इलाकों में आजीविका के वैकल्पिक तौर-तरीके विकसित करने होंगे

शिमला।

जलवायु परिवर्तन के चलते उत्तराखंड के पहाड़ी जिलों में जहां अधिकतम तापमान में तेजी से वृद्धि के आसार हैं। वहीं, बारिश के पैटर्न में बदलाव की आशंका है, जिस वजह से पहाड़ी रायों में पलायन और बढ़ सकता है। यह बात जर्मनी के पोट्सडैम इंस्टीट्यूट फॉर क्लाइमेट रिसर्च (पीआईके) और द एनर्जी एन्ड रिसोर्सेज इंस्टीट्यूट (टेरी), नई दिल्ली के एक अध्ययन फ्लॉक्ड हाउसेज, फैलो लैंड्स-क्लाइमेट चेंज एण्ड माइग्रेशन इन उत्तराखंड, इंडिया में कही गई है। अध्ययन के मुताबिक, चूंकि ऊंचाई बढ़ने के साथ तापमान के बढ़ने की दर में भी वृद्धि होती जाती है, इसलिए उत्तरकाशी, चमोली, रुद्रप्रयाग, और पिथौरागढ़ सहित उत्तराखंड के पहाड़ी जिले अधिक गर्मी का सामना कर रहे हैं। अधिक ऊंचे पहाड़ निचले इलाकों की तुलना में कहीं अधिक तेजी से बदलाव का अनुभव करते हैं। ऐसा हिमपात, बादलों और वायुमंडल एवं सतह में मौजूद जलवाष्प में आने वाले परिवर्तन के कारण होता है, जो उन्हें जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के प्रति अधिक संवेदनशील बना देते हैं।

एलिवेशन डिपेंडेंट वार्मिंग के चलते सबसे अधिक तेजी से बढ़ रहा है। क्लाउड कवर और एटमॉस्फेरिक और सरफेस वाटर वेपर में आ रहे बदलाव के कारण ऐसा हो रहा है। इसके चलते ऊंचे पर्वतीय इलाकों में अपेक्षाकृत अधिक तापमान बढ़ रहा है और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के पड़ने का खतरा भी बढ़ गया है। अध्ययन में जलवायु परिवर्तन के प्रभावों जैसे-बढ़ते तापमान, ग्लेशियरों के पिघलने और वर्षा के पैटर्न के बदलने से किस तरह राय की आजीविका पर असर पड़ रहा है और लोग पलायन को मजबूर हो रहे हैं पर फोकस किया गया है। रिपोर्ट में बताया गया है कि भविष्य में नीति-निर्माता तीन क्षेत्रों में काम कर सकते हैं- 1) सबसे पहले पलायन के चलते आ रहे डेमोग्राफिक बदलावों के लिए तैयार हुआ जा सकता है. 2) अर्थव्यवस्था को पुनर्जीवित करने के लिए पर्वतीय इलाकों के आजीविका के वैकल्पिक साधन मुहैया कराये जा सकते हैं 3) पर्वतीय इलाकों से राय के बाहर होने वाले पलायन को देखते हुए राय के जलवायु परिवर्तन एक्शन प्लान और राय की कृषि-नीतियों पर फिर से विचार किया जा सकता है। पीआईके के डॉयरेक्टर इमीरिट्स प्रोफेसर हैंस शैलह्यूबर ने कहा, पलायन का मुद्दा वास्तव में ट्रांजीशन प्रबंधन का मुद्दा है। हालांकि 1.5 डिग्री सेल्सियस का लक्ष्य हासिल करना मुश्किल है लेकिन अगर हम ग्लोबल वार्मिंग को 2 डिग्री सेल्सियस तक भी काबू कर सकें तो हम आने वाली चुनौतियों से निपट सकेंगें। हमें उत्तराखंड में उन जगहों की शिनाख्त करनी होगी जहां तापमान बढ़ने के कारण इस सदी के अंत तक रहने की स्थितियां अनुकूल होंगी। हमें ऐसी जगहों को जीवित और टिकाऊ बनाकर रखना होगा। ये गवर्नेंस और समुदायों दोनों के लिए बहुत बड़ी चुनौती है।

इंटरनेशनल सोलर एलाइंस के महानिदेशक डॉ अजय माथुर (टेरी के पूर्व महानिदेशक) ने कहा, ट्रांजीशन प्रबंधन रणनीति से इस तरह के नीतिगत परिवर्तन होने चाहिए जिससे प्रवासियों के लिए एकीकृत तरीके से काम किया जा सके। और इस तरह की स्थितियों का निर्माण हो सके जिससे जलवायु परिवर्तन के हानिकारक प्रभाव लोगों की रोजी-रोटी को खत्म ना करे बल्कि उनका बचाव कर सके। पलायन को हमें ऐसे चयन के रूप में देखना होगा जिससे स्थानीय आबादियों की वापस अपने रोजमर्रा के जीवन में लौटने और रोजी-रोटी की क्षमता को बढ़ाया जा सके। अध्ययन के सह-लेखक सौरभ भारद्वाज (टेरी) ने इसके जारी होने के मौके पर बोलते हुए कहा, हमनें अपने विश्लेषण के आधार पर अनुमान लगाया है कि निकट भविष्य (2021-2050) में राय का औसत वार्षिक अधिकतम तापमान मीडियम वार्मिंग आरसीपी 4.5 पाथवे के तहत 1.6 डिग्री सेल्सियस और हाइयर वार्मिंग आरसीपी 8.5 के तहत 1.9 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ सकता है। वैज्ञानिक आरसीपी यानि रिप्रेज़ेंटेटिव कॉन्सन्ट्रेशन पाथवे का इस्तेमाल ये अनुमान लगाने में करते हैं कि वायुमंडल में मानवीय गतिविधियों के चलते ग्रीन हाउस गैसों की मात्रा भविष्य में किस तरह बदलेगी। आरसीपी 8.5 के तहत माना जाता है कि भविष्य में ग्रीन हाउस गैसों की मात्रा बहुत यादा बढ़ेगी (इन गैसों के उत्सर्जन को रोकने के निचले प्रयासों के चलते) जबकि आरसीपी 4.5 के तहत ये माना जाता है कि भविष्य में ग्रीन हाउस गैसों की मात्रा मध्यम स्तर पर बढ़ेगी (इन गैसों के उत्सर्जन को रोकने के मध्यम प्रयासों के चलते)। इस तरह आरसीपी के माध्यम से नीति-निर्माताओं को विज्ञान-आधारित साक्ष्य मिल जाते हैं जिससे वे भावी योजनाएं तैयार कर सकते हैं। रिपोर्ट के अनुसार, निकट भविष्य (2021-2050) में राय में होने वाली वार्षिक वर्षा के आरसीपी 4.5 पाथवे के तहत 6 फीसदी बढ़ने का अनुमान है जबकि आरसीपी 8.5 के तहत 8 फीसदी बढ़ने का अनुमान है. राय के दक्षिणी जिलों ऊधम सिंह नगर, नैनीताल, चम्पावत और पौड़ी-गढ़वाल में निकट भविष्य में वर्षा की वार्षिक औसत मात्रा के राय के अन्य भागों की तुलना में सबसे अधिक रहने का अनुमान है। अध्ययन की मुख्य लेखिका और पीआईके की हिमानी उपाध्याय ने बताया, जलवायु परिवर्तन राय में रिस्क मॉडीफायर का काम रहा है और इसका असर राय से भारी संख्या में पलायन कर रही आबादी पर पड़ रहा है। लगभग 70 फीसदी आबादी वर्षा-आधारित कृषि पर निर्भर है जो कि बहुत अधिक उत्पादक नहीं होती। बीते दो दशकों में जलवायु परिवर्तन के चलते कृषि-उत्पादकता में और भी यादा गिरावट आई है और आबादी पर राय से बाहर पलायन करने का दबाव बढ़ा है। रिपोर्ट में बताया गया है कि पानी की लगातार कमी के चलते आरसीपी 4.5 और आरसीपी 8.5 दोनों में फसलों की उपज गिर सकती है। इसके चलते राय के बाहर होने वाला पलायन बढ़ेगा क्योंकि लोगों की आय में गिरावट आएगी और नतीजतन पर्वतीय पहाड़ी इलाकों में बड़ी संख्या में आबादी पलायन करने को मजबूर होगी। उत्तराखंड के रूरल डेवलपमेंट और माइग्रेशन कमीशन के अनुसार, राय के ग्रामीण इलाकों में आजीविका के तौर-तरीकों को विविधता प्रदान करने में नाकामी राय से बाहर होने वाले पलायन की सबसे बड़ी वजह (50 फीसदी) है. इसके बाद शैक्षणिक संस्थानों की कमी (15 फीसदी) और स्वास्थय सुविधाओं का अभाव (9 फीसदी) इसकी सबसे बड़ी वजहें हैं. इन सबके चलते साल 2011 से लगभग 734 गांव खाली हो चुके हैं और इससे पता चलता है कि कितनी तेजी से लोग पर्वतीय पहाड़ी इलाकों से पलायन कर रहे हैं। रिपोर्ट में इस बात पर भी ध्यान खींचा गया है कि उत्तराखंड में अछी गुणवत्ता वाले और क्रमबद्ध मौसमीय आंकड़ों का भी अभाव है जो राय में जलवायु परिवर्तन से जुड़े किसी भी शोध की संभावनाओं को सीमित कर देता है. इसलिए रिपोर्ट का मानना है कि राय के मौसम स्टेशनों को संख्या और गुणवत्ता के हिसाब से बहुत सुधार की आवश्यकता है. इसके लिए हाई रेसोल्यूशन रीजनल स्केल मॉडलों में निवेश करना होगा।

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक सोनल मेहता केलिए प्रतीक्षा ग्राफिक्स, 127 देवी अहिल्या मार्ग, इंदौर (म.प्र.) से मुद्रित एवं 209-बी शहनाई रेसीडेंसी-2 कनाड़िया रोड इंदौर (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक: डॉ. सोनल मेहता फोन : 0731-2595008 Mail.sonal12mehta@yahoo.co.in 9755040008